लोक स्वराज्य की आवाज

स्वराज्य की आवाज बहुत कर्णप्रिय होती है, हर व्यक्ति को सुख का अनुभव कराती है, किन्तु स्वराज्य की आवाज राजनेताओं के कलेजे में तीर की भांति चुभती है। विचारणीय प्रश्न यह है कि ऐसा क्यों होता है? क्यों कोई आदमी किसी दूसरे पर उसकी इच्छा, सहमति या आवश्यकता के बिना अपने निर्णय का निष्कर्ष थोपना चाहता है? जो व्यक्ति स्वयं को नेता मानता है वह तो सामान्य व्यक्ति से अधिक समझदार होता है। फिर ऐसा समझदार व्यक्ति भी ऐसी इच्छा रखे यह तो पूरी तरह नासमझी की बात है। क्या नेता मनुष्य नहीं होता? मेरे विचार में तो ऐसा ही महसूस होता है। यह बात वैसे तो पूरे विश्व के नेताओं पर, कुछ कम हो या ज्यादा, लागू होती है किन्तु भारतीय नेताओं पर तो यह बात पूरी तरह अक्षरशः प्रमाणित होती है। भारत का हर राजनैतिक कार्यकर्ता स्वयं को मनुष्य समझता ही नहीं, सिर्फ नेता ही समझता है, जिसका अर्थ होता है अन्य सभी मनुष्यों से सर्वाधिक श्रेष्ठ समझदार तथा अन्य सभी मनुष्यों के विषय में उचित अनुचित का निर्णय करने की सर्वाधिक योग्यता रखने वाला।

भारत में पूर्व काल से अब तक अनेक नेता अथवा राजनीति के संबंध में विचार प्रस्तुत करने वाले महापुरुष हो चुके हैं। बहुत पुराने ऐतिहासिक राजाओं तथा महापुरुषों से चर्चा शुरु न करके हम स्वामी दयानन्द से यह चर्चा प्रारंभ करते है क्योंकि वे नवीनतम समय के महापुरुष हैं जिसके अधिकृत विचार उपलब्ध हैं। स्वामी जी ने आर्य समाज के दस नियमों में ही इस बात का स्पष्ट उल्लेख किया है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने व्यक्तिगत निर्णय में पूर्ण स्वतंत्रता होनी चाहिये तथा दूसरों की स्वतंत्रता को प्रभावित करने वाले मामलों में व्यक्ति पूरी तरह परतंत्र रहें। मेरे विचार में स्वराज्य की यह परिभाषा स्पष्ट और पूर्ण है। इसमें न तो व्यक्ति की उच्श्रृंखला को छूट दी गई है न ही व्यक्ति की स्वतंत्रता में बाधा उत्पन्न करने को। व्यक्ति को अपनी व्यक्तिगत सीमा में निर्णय करने की पूरी स्वतंत्रता है किन्तु उसकी अन्तिम सीमा व्यक्तिगत निर्णय तक ही निर्धारित है। स्वामी जी ने जो परिभाषा बनाई उसमें व्यक्ति के बाद सीधे समाज मान लिया जबकि व्यक्ति के बाद परिवार, स्थान, जिला, प्रदेश, राष्ट्र, और तब समाज का नंबर आना चाहिये था।

कार्ल मार्क्स और गॉधी भी ऐसे महापुरुष हुए जिन्होंने इस संबंध में व्यापक विचार विमर्श किया। मार्क्स और गांधी दोनों ने व्यक्ति को व्यक्तिगत निर्णय की स्वतंत्रता देने की वकालत की है। किन्तु मार्क्स और गॉधी के विचारों में कुछ फर्क भी रहा है। मार्क्स ने शासन रहित व्यवस्था की बात कही है और गॉधी ने शासन मुक्त व्यवस्था की। मार्क्स का सिद्धांत यह था कि व्यक्ति भय से ही ठीक–ठीक संचालित हो सकता है। भय तीन प्रकार के है– 1. ईश्वर का 2. समाज का 3 शासन का। ईश्वर का भय न के बराबर होने से प्रभावहीन हो गया है। अब तो अनेक हिन्दू भगवान का नाम डकैती और चोरी जैसे कार्यो में सफलता के लिये लेने लगे हैं जबकि मुसलमान तो खुदा के लिये ही हत्याएँ करने लगे हैं। संघ परिवार भी अब मुसलमानों का अनुशरण करने लगा है। समाज का कोई ढांचा ही नहीं है अतः समाज भी प्रभावहीन है। शासन का अस्तित्व है और वह भय पैदा कर सकता है। किन्तु उसकी व्यवस्था भी व्यक्ति के हाथ में होने से दुरुपयोग हो सकता है। अतः सत्ता धीरे–धीरे ऊपर जाकर अदृश्य हो जावे तथा व्यक्ति ऐसी अदृश्य सत्ता के भय से ठीक काम करता रहे जिसमें सत्ता का कोई अस्तित्व ही न हो, अर्थात् एक प्रकार से पुराने ईश्वर के भय के स्थान पर वैसा ही भय अदृश्य राज सत्ता का बन जावे। मार्क्स का विचार सफल नहीं हो पाया। लेनिन ने उसे कुछ आगे बढ़ाया किन्तु लेनिन के बाद आये स्टालिन आदि ने इस सिद्धांत को तानाशाही का माध्यम बना लिया और इसे कभी चरम तक पहुँचाने का प्रयत्न ही नहीं किया। बाद में गॉधी जी ने इस संबंध में स्पष्ट विचार प्रस्तुत किये। गॉधी जी के कालखण्ड में स्वतंत्रता संघर्ष में सुभाषचन्द्र बोस, भगत सिंह आदि का भी नाम आता है। स्वतंत्रता के प्रयत्नों में सुभाष बाबू, भगत आदि का प्रयत्न और त्याग गॉधी जी से कुछ अधिक ही माना जाना चाहिये किन्तु स्वराज्य के विषय में उन तीनों की सोंच भिन्न–भिन्न रही है। सुभाष बाबू और गॉधी जी के बीच हिंसक या अहिंसक मार्ग का तो भेद था ही किन्तु इससे भी बड़ा वैचारिक भेद यह था कि सुभाष बाबू स्वतंत्रता के बाद अल्पकाल के सैनिक शासन की सोचते थे और गॉधी जी प्रारंभ से ही शासन मुक्त व्यवस्था लागू करना चाहते थे। भगत सिंह आदि कांतिवीरों के त्याग और बलिदान स्वतंत्रता के प्रयत्नों के हिसाब से बहुत महत्वपूर्ण रहे है किन्तु उनकी भूमिका भविष्य के संबंध में स्पष्ट नीति के संबंध में गॉधी और सुभाष सरीखी उल्लेखनीय नहीं रही।

गॉधी और सुभाष के बाद नेताओं का युग आ गया। नेताओं पर किसी का कोई अंकुश रहा नहीं। अतः राजनीति को अपनी सत्ता लिप्सा का माध्यम बनाने की शुरुवात नेहरु पटेल, अम्बेडकर युग से हो गई। ये तीनों ही कभी विकेन्द्रीकरण के पक्षधर नहीं रहे। तीनों ने ही सुशासन की बात की है। पटेल ने स्वराज्य को सैद्धांतिक और

व्यावहारिक दोनों तरह से अस्वीकार किया और नेहरु जी ने सैद्धांतिक रुप से स्वराज्य की बात की किन्तु व्यावहारिक रुप से हमेशा स्वराज्य के स्थान पर सुराज्य को तरजीह देते रहे। अम्बेडकर जी को न स्वराज्य से मतलब था न सुराज्य से। वे तो जीवन भर अम्बेडकर राज्य को ही स्वराज्य भी समझते रहे और सुराज्य भी। गॉधी जी के बाद विनोबा जी आये जिन्होंने गॉधी जी की स्वराज्य की अवधारणा को अधिक स्पष्ट रुप से प्रस्तुत करते हुए कहा कि गॉव को गलती करने तक की स्वतंत्रता का नाम ग्राम स्वराज्य है। किन्तु विनोबा जी ने कभी अपने इस विचार को शासन मुक्ति की दिशा में ले जाने का कोई ठोस प्रयास नहीं किया। उनका भूदान आंदोलन भूमि समस्या के एक स्थायी समाधान का प्रयत्न तो था किन्तु वह इतना बड़ा आंदोलन भी कभी ग्राम स्वराज्य या शासन मुक्ति की दिशा में नहीं मुड़ सका।

आधुनिक काल में गॉधी और विनोबा के बाद स्वराज्य की सबसे स्पष्ट व्याख्या की है रजनीश ने। रजनीश नेताओ उपनिषद में लिखा कि शासन जितना कम हो उतना ही अच्छा होता है। शासन का बिल्कुल ही न होना श्रेष्ठता की पराकाष्ठा है, यद्यपि ऐसा संभव नहीं। शासन की अधिकता का अर्थ होता है पराधीनता और जब शासन और व्यक्ति के अधिकारों के बीच की दूरी असीम हो जाये तो वह स्थिति पराधीनता की पराकाष्ठा अर्थात् गुलामी होती है। रजनीश ने स्वराज्य की इतनी स्पष्ट व्याख्या करने के बाद भी इसके कार्यान्वयन का कोई प्रयास नहीं किया। परिणाम स्वरुप उनकी व्याख्या विचारों तक की सीमित हो गई।

स्वराज्य के संबंध में रजनीश और विनोबा के ही कार्यकाल में जयप्रकाश जी ने भी बिल्कुल स्पष्ट व्याख्या दी। उन्होंने ग्राम स्वराज्य शब्द के स्थान पर लोक स्वराज्य शब्द स्थापित किया। जयप्रकाश जी ने आज से चालीस वर्ष पूर्व जो पुस्तक लिखी उसमें स्पष्ट लिखा था कि भारत में संसदीय लोकतंत्र के स्थान पर सहभागी लोकतंत्र की स्थापना होनी चाहिए। उन्होंने उसी समय स्पष्ट लिखा था कि केन्द्र सरकार के पास पांच छः से अधिक विभाग नहीं रहने चाहिये। अन्य सभी विभाग नीचे की इकाइयों में बंट जावे। किन्तु जयप्रकाश जी की बात विनोबा जी के सामने कमजोर पड़ी, और जब सन् पचहत्तर में जयप्रकाश जी ने निर्णायक संघर्ष किया तो उस संघर्ष में विनोबा जी से मतभेद के कारण राजनेताओं की मदद लेनी पड़ी और हम पहले ही लिख चुके है कि राजनेता अपने को कभी मनुष्य नहीं मानता। वह तो स्वयं को मनुष्यों पर शासन करने का अधिकृत नेता मानता है। जयप्रकाश जी के प्रयत्नों का भी वही परिणाम हुआ और अधिकार प्राप्त होते ही राजनेताओं ने जे.पी. के लोक स्वराज्य के विचार को दूर फेंककर सुशासन का मार्ग पकड़ लिया।

जे.पी. के बाद श्री ठाकुरदास जी बंग, मनमोहन चौधरी सिद्धराज जी ढढा आदि ने पचीस वर्ष पूर्व लोक स्वराज्य संघ बनाकर स्वराज्य की अवधारणा को आगे बढ़ाने की नीव डाली। सैद्धांतिक रुप से सहमति के बाद भी कुछ प्रक्रिया संबंधी मत भिन्नताओं ने उक्त स्वराज्य के बीज को अंकुरित होने के पूर्व ही सुखा दिया।
निराश बंग जी ने दो हजार सात मे शिवशंकर पेंटे, रामबहादुर राय, आर्य भूषण भारद्वाज, बजरंग लाल अग्रवाल, दुर्गा प्रसाद आर्य आदि को साथ लेकर फिर से सेवाग्राम से लोक स्वराज्य की मशाल जलाने की कोशिश की किन्तु रामचंद्र राही, कुमार प्रशान्त सहित गांधीवादी नेताओं के बहुमत ने बंग जी के इस प्रयत्न का इतना प्रबल विरोध किया कि बेचारे बंग जी को सेवाग्राम में ऐसी बैठक करने से भी रोक दिया गया। बंग जी को वह बैठक बाहर ही करके लोक स्वराज्य की मुहिम के लिये जन जागरण प्रारंभ करने की घोषणा करनी पड़ी। मुहिम प्रारंभ ही हुई थी कि बंग साहब का देहावसान हो गया।

इसके बाद अन्ना, अरविन्द ने यह कार्य हाथ में लिया। अन्ना हजारे की सोच भी स्पष्ट थी तथा अरविन्द केजरीवाल ने तो स्वराज्य नामक पुस्तक को ही आंदोलन का आधार घोषित किया था। इस प्रयत्न को गांधीवादियों तथा बंग जी की टीम के सभी साथियों का भी सक्रिय समर्थन प्राप्त था। किन्तु अरविन्द केजरीवाल की सत्ता की भूख ने इस गाड़ी को पटरी से उतार दिया।

प्रश्न उठता है कि इतने अच्छे विद्वानों के विचारों और प्रयत्नों में क्या कमी रही जो स्वराज्य का विचार न तो आगे बढ़ पाया न ही स्पष्ट हो पाया। इसके अलग–अलग कारण है। सुभाषचन्द्र बोस और भगत सिंह की तो इस दिशा में कोई सोच ही नहीं थी। नेहरु जी, अम्बेडकर जी और पटेल जी की स्वराज्य की दिशा में इच्छा नहीं थी। रजनीश अन्य अनेक कार्यो में व्यस्त थे। गॉधी विनोबा और जयप्रकाश ही कुल मिलाकर ऐसे लोग थे जो स्वराज्य की दिशा में कुछ सोचते भी थे और करना भी चाहते थे। तीनों में अच्छा तालमेल नहीं बन पाया। प्रायः प्रत्येक विचारक चिन्तन करता है, समीक्षा करता है, संशोधन करता है और यदि आवश्यक हो तो अपने पूर्व विचारों को तर्कसंगत तरीके से बदल भी देता है। किन्तु बाद के लोग उक्त महापुरुष के विभिन्न परिस्थितियों तथा विभिन्न

संदर्भो को बिना विचारे ही ऐसे भिन्न–भिन्न विचारों को उद्धरित करके महापुरुष के चिन्तन को ही विवादास्पद बना देते है। गॉधी जी के साथ भी यही हुआ। गॉधी जी जीवन भर शराब के विरुद्ध रहे। कभी उन्होंने किसी संदर्भ में कहा होगा कि यदि मैं तानाशाह होता तो कानून बनाकर शराब बन्द कर देता। यह पूरी तरह स्पष्ट है कि गॉधी जी शासन मुक्त व्यवस्था के पक्षधर थे। वे ग्राम स्वराज्य पर पूरा–पूरा जोर देते थे। गॉधी जी कभी भी कानून से शराब सहित किसी भी कुरीति निवारण के विरुद्ध थे। किन्तु बाद के लोगों ने उनके शराब संबंधी कथन को आधार बनाकर ग्राम स्वराज्य के विचार को ही विवादास्पद बना दिया। गॉधी जी की स्पष्ट सोच को तीन चार अस्पष्टताओं ने नुकसान किया 1. ग्राम स्वराज्य में व्यक्ति और परिवार की स्पष्ट भूमिका होने के बाद भी स्थिति अस्पष्ट हो गई। इसी तरह शहर और ग्राम का भी विवाद खड़ा हो गया। 2. गांधीजी ने व्यक्तिगत और सामाजिक हिंसा का तो प्रतिरोध ठीक किया किन्तु शासन द्वारा अपराधियों को दिये जाने वाले दण्ड के संबंध में उन्हें स्पष्ट समर्थन करना चाहिये था। 3. गांधी जी छुआछूत के विरूद्ध थे यह बात सही है किन्तु छुआछूत को कानून से दण्डनीय बनाने का स्पष्ट विरोध न करने से ग्राम स्वराज्य की अवधारणा धुमिल हुई। विचारणीय मुद्दा है कि जो व्यक्ति चोरी, डकैती और हत्या में हृदय परिवर्तन का पक्षधर हो वही व्यक्ति छुआछूत को दंडनीय अपराध बनाने का पक्षधर हो ही नहीं सकता। किन्तु या तो गॉधी जी के विचारों में भूल रही या हम समझने में भूल कर बैठे। स्थिति चाहे जो हो किन्तु स्वराज्य की अवधारणा इस अस्पष्टता से धूमिल हुई। गॉधी जी की अपेक्षा विनोबा जी की स्वराज्य की अवधारणा अधिक स्पष्ट थी किन्तु विनोबा जी का शासन मुक्ति का मार्ग बिल्कुल अस्पष्ट था। गॉधी जी राजनीति से दूरी का अर्थ राजनीति में सक्रियता से दूरी तक सीमित मानते थे किन्तु शासन की गलत नीतियों का विरोध, सत्याग्रह और आंदोलन के पूरी तरह पक्षधर थे किन्तु विनोबा जी ने राजनीति में सक्रियता से दूरी का अर्थ राजनीति और शासन निरपेक्ष कर दिया। परिणाम यह हुआ कि शासन मुक्ति का अर्थ शासन पर निर्भरता के अभाव अर्थात भौतिक स्वावलंबन तक सीमित हो गया। शासकीय अधिकार दायित्व तथा हस्तक्षेप को पूरी तरह छूट मिल गई। स्वराज्य की बिल्कुल स्पष्ट अवधारणा होने के बाद भी उसके लिये न कोई सत्याग्रह हुआ न आंदोलन। जयप्रकाश जी की सोच इस संबंध में अधिक तर्क संगत थी। वे ग्राम स्वराज्य के स्थान पर लोक स्वराज्य शब्द के भी पक्षधर थे तथा शासकीय अधिकार दायित्व एवं हस्तक्षेप कम से कम करके नीचे की इकाइयों को अधिक अधिकार देने के भी पक्षधर। किन्तु विनोबा जी की कार्यप्रणाली से तालमेल का अभाव उन्हें कुठित कर गया। बीस वर्ष पूर्व का ठाकुरदास जी बंग आदि का प्रयास तो प्रारंभ ही नहीं हो पाया। मेरे विचार से लोक स्वराज्य संघ का यह प्रयास रूकना हमारी बड़ी भूल थी। इस प्रयास के प्रारंभ होते समय हमारे पास गॉधी विनोबा तथा जयप्रकाश जी के विचार, कार्यप्रणाली, सफलता तथा असफलता का अच्छा खासा अनुभव भी था तथा तब तक राजनीति की विश्वसनीयता भी समाज में पूरी तरह समाप्त थी। किन्तु हमारी एक भूल ने हमारे प्रयासों को कई वर्ष आगे ढकेल दिया।

अन्ना आंदोलन ने तो इस आंदोलन को और भी पीछे ढकेल दिया। जितनी तेजी से यह आंदोलन बढा और उसके परिणाम में फिर से उसी सत्ता का जन्म हुआ उसने समाज को बहुत निराश किया। अब अरविन्द केजरीवाल भी सब काम छोड़कर उसी तरह सुशासन की बात करने लगे है।

किन्तु निराशा कोई समाधान नहीं है। लाख असफलताओं के बाद भी हमे फिर से कुछ न कुछ करना तो होगा ही। अक्टूबर दो हजार पंद्रह को नोएडा धर्मशाला मे कुछ गांधीवादी, आर्यसमाज, गायत्री परिवार तथा संघ परिवार के छिन्न भिन्न लोगों ने बैठकर दो हजार सात में बंग जी द्वारा प्रारंभ दिशा को आधार बनाकर व्यवस्था परिवर्तन अभियान नाम से एक संगठन बनाने और लोक स्वराज्य की एक सूत्रीय दिशा में बढ़ने का मार्ग पकड़ा है। अब तक करीब दो सौ पचास जिलों तक संगठन बन चुका है। पूरे भारत में बहुत तेज सक्रियता जारी है।

पूर्व तक भारत किसी एक परिवार की कृपा तक आश्रित था। अब नरेन्द्र मोदी के बाद परिवार बाद की गुलामी से मुक्ति मिली है। नरेन्द्र मोदी निरंतर सुशासन की दिशा में बढ़ रहे है जो लोक स्वराज्य की दिशा के ठीक विपरीत केन्द्रीयकरण की दिशा है। या तो मोदी जी लोक स्वराज्य अर्थात सहभागी लोकतंत्र और संसदीय लोक तंत्र का अंतर समझेगे या भारत की जनता में सुशासन के बाद स्वशासन की भूख बढ़ेगी। दोनों ही परिस्थितियां लोक स्वराज्य के लिये अनुकूल हैं। आवश्यकता है कि और अधिक तर्कपूर्ण जन जागरण तथा अहिंसक संवैधानिक तरीके से तथा संगठन विस्तार के माध्यम से दोनों दिशाओं में सक्रियता बढ़े। लोक स्वराज्य अर्थात सहभागी लोकतंत्र हमारा लक्ष्य है। हम संवैधानिक सत्ता को समझाकर या जनमत का भय बनाकर किसी एक दिशा के लिये सहमत कर सकते है।

राजनीति की विश्वसनीयता लगातार घटी है। हम और कम प्रयास से प्रमाणित कर सकते है कि शासन मुक्ति ही एकमात्र मार्ग है, दूसरा कोई मार्ग नहीं। गॉधी जी लगातार समाज सुधार ग्राम सुधार के जो भी प्रयास करते थे वे

शासन मुक्ति में सहायक होते थे क्योंकि उससे शासन कमजोर होता था। विनोबा जी के कार्यकाल में समाज सुधार के काम तो बहुत तीव्र गति से हुए किन्तु उनका मुँह शासन मुक्ति की दिशा में नहीं था अतः शासन की पकड़ लगातार मजबूत होती गई। अब पुनः हमें उसी दिशा में सक्रिय होना होगा जिसके अनुसार हमारे समाज सुधार के काम तो सब चलते रहें किन्तु उनकी दिशा शासन के प्रभाव को घटाने वाली हो। साथ ही हम संवैधानिक परिवर्तनो द्वारा भी शासन मुक्ति के निरंतर और अधिकतम प्रयास करें। सौभाग्य से इस दिशा में सक्रिय कदम उठा लिया गया है और आशा है कि शीघ्र ही अनुकूल परिणाम दिखेंगे। मैं तो नई परिस्थितियों से पूरी तरह आश्वस्त हूँ

भारत की राजनीति में अरविन्द और अखिलेश

लगभग पांच सात वर्षो से मैं यह मानता रहा और लिखता रहा कि भारतीय राजनीति में तीन के बीच नेतृत्व की प्रतिस्पर्धा है। 1. नीतिश कुमार 2. अरविन्द केजरीवाल, 3. नरेन्द्र मोदी। मै यह भी लिखता रहा कि नरेन्द्र मोदी सत्ता का कार्यकाल केन्द्रियकरण की दिशा में बढ़ेगा तथा समस्याओं का निश्चित और त्वरित समाधान होगा। जबकि नीतिश कुमार तथा अरविन्द केजरीवाल, लोकतांत्रिक तरीके से कार्य करेंगे। सत्ता विकेन्द्रित होगी लेकिन समस्याओ के समाधान में विलंब होगा। भारत की जनता ने दोनों विकल्पों पर अलग–अलग प्रयोग किया अर्थात केन्द्र की सत्ता में नरेन्द्र मोदी को बिठा दिया तथा प्रदेश की सत्ता में नीतिश कुमार, अरविन्द केजरीवाल को। उस समय तक अखिलेश यादव किसी गंभीर राजनैतिक चर्चा में नहीं थे। न ही अच्छे लोगों की सूची में, और न ही बुरे लोगों की सूची में। किन्तु मुलायम सिंह तथा उनके दोनों भाई, लालू, पासवान, मायावती, ममता बनर्जी सरीखे नेताओं की सूची में शामिल थे, जिन्हे कोई बहुत अच्छा आदर्श राजनेता नहीं कहा जा सकता। यह अवश्य है कि उत्तर प्रदेश के चुनाव में अखिलेश यादव की साफ सुथरी छवि का स्पष्ट प्रभाव दिखा था।

अनुभव बताता है कि नरेन्द्र मोदी उम्मीद से कई गुना अधिक सफल प्रधानमंत्री हुए हैं। दूसरी ओर नीतिश कुमार भी सफल मुख्य मंत्री माने जा रहे है, तथा चुनाव के बाद उनका कद और बढ़ा ही है। किन्तु राजनीति की कसौटी पर अरविन्द केजरीवाल और अखिलेश यादव विद्यार्थी के तौर पर परीक्षा दे रहे थे। अरविन्द केजरीवाल का 49 दिनों का कार्यकाल इतना मनमोहक था कि दिल्ली के लोगो में एक बहुत बड़ी उम्मीद का संचार कर गया। उस कार्यकाल में उनकी हर बात विश्वसनीय लगती थी तथा लोकतांत्रिक लगती थी, जबकि दुबारा सत्ता में आये तो उनसे परिस्थितियों का ऑकलन करने में कहीं न कहीं चूक हुई। अरविन्द जी को प्रारंभ से ही यह उम्मीद थी कि नरेन्द्र मोदी की तानाशाही सरकार उन्हें बहुत जल्दी बर्खास्त कर देगी, और वे बर्खास्तगी को आधार बनाकर पूरे देश मे विपक्षी नेता के रूप में स्वयं को स्थापित कर लेंगे। यहां तक कि उनके द्वारा मुझे भी यही आभाष कराया गया था और मैंने उन्हें स्पष्ट कहा था की आप भ्रम में हैं। नरेन्द्र मोदी सरकार किसी भी परिस्थिति में आपकी सरकार को भंग नहीं करेगी जबकि उन्होंने इस संबंध में एक निश्चित दावा तक किया था। अरविन्द जी ने उटपटांग आरोप लगाये और वह सब कुछ किया जो अपनी बर्खास्तगी के लिये किया जा सकता था। किन्तु नरेन्द्र मोदी की सरकार ने यह निश्चित कर लिया था कि चाहे कुछ भी हो जाये हम उन्हें बर्खास्त नहीं करेंगे। इस एक चूक के कारण आज अरविन्द केजरीवाल की ऐसी स्थिति हो गई है कि न तो वो शहीद हो पा रहे हैं न ही वे एक सफल मुख्यमंत्री के रूप मे स्थापित हो पा रहे हैं।

यदि हम इसके ठीक विपरीत अखिलेश यादव की चर्चा करें तो मुलायम सिंह परिवार के स्वभाव तथा कार्य प्रणाली के ठीक विपरीत अखिलेश यादव का कार्यकाल रहा। जब डी.पी. यादव सरीखे बाहुबली को उन्होंने पार्टी में शामिल करने से इनकार किया था, तब उनकी सोच की पहली झलक मिली थी। उसके बाद उन्होंने मुजफ्फर नगर के दंगो के समय इस्लामिक कट्टरवाद के बढ़ते मनोबल को तोड़ने के लिये थोड़ा सा इशारा किया था। उस समय भी उनकी प्रतिष्ठा बढ़ी थी। अभी मथुरा में अपने परिवार की सोच के विरूद्ध जाकर उन्होंने रामवृक्ष यादव पर पुलिस कार्यवाही कराने का इशारा दिया। वह भी एक अच्छा कार्य था। किन्तु अभी दो दिन पहले अखिलेश यादव ने गाजीपुर के बाहुबली मुख्तार अंसारी और उनकी पार्टी के समाजवादी पार्टी में सम्पन्न हो चुके विलय के विरूद्ध विद्रोह किया। यह कोई साधारण घटना नहीं थी। इस विलय में उनके चाचा तो प्रमुख थे ही किन्तु उनके पिता मुलायम सिंह जी की भी सहमति थी किन्तु अखिलेश यादव ने सशक्त कदम उठाते हुए इस विलय को तोड़ने के लिये अपने पिता और चाचा को मजबूर कर दिया। मैं मानता हूँ कि इस विलय के न होने से समाजवादी पार्टी को उत्तर प्रदेश में राजनैतिक नुकसान होगा किन्तु यह भी स्पष्ट है कि इस विलय को अस्वीकार करके अखिलेश यादव ने अरविन्द केजरीवाल पर राजनैतिक बढ़त बना ली है। जहां अरविन्द केजरीवाल बढ़–बढ़ कर बोलने में ही

अपने को योग्यतम सिद्ध करते रहते हैं वहीं अखिलेश यादव ने चुप रहकर भी अपने को योग्यतम सिद्ध करने का सफल प्रयत्न किया। अखिलेश यादव के लिये यह और भी अधिक कठिन कार्य था क्योंकि उनके पिता और चाचा उनके स्वभाव के ठीक विपरीत राजनीति के सिद्धहस्त खिलाडी रहे है, तथा अब भी वे उस खेल से बाहर नहीं हैं। किन्तु इसके बाद भी बत्तीस दातों के बीच एक जीभ के समान अखिलेश निर्विघ्न कार्य करते रहे। दूसरी ओर अरविन्द्र केजरीवाल 32 दातों के समान लगातार एक जीभ पर आक्रमण मात्र ही करते रहे और अपने दांत कमजोर करते रहे।

अबतक मैं किसी अंतिम नतीजे पर नहीं पहुचा हूँ कि अरविन्द केजरीवाल को प्रधानमंत्री की दौड़ से बाहर करके अखिलेश यादव को उसमे शामिल करूं क्योंकि अरविन्द केजरीवाल के एक ऑकलन की भूल दिखाई देती है। साथ ही एक बात पूरी तरह स्पष्ट हो गई है कि अरविन्द केजरीवाल नरेन्द्र मोदी की तुलना मे कई गुना अधिक तानाशाही प्रवृत्ति के है। दूसरी ओर अभी अखिलेश यादव की कई स्वतंत्र परीक्षा होनी बाकी है। किन्तु इतना स्पष्ट है कि अरविन्द केजरीवाल धीरे–धीरे इस दौड में पिछड रहे है, तथा अखिलेश यादव धीरे–धीरे इस दौड में आगे बढ़ रहे है। अरविन्द और अखिलेश की दूरी घटती जा रही है । पता नहीं कब यह दूरी घटते–घटते विपरीत दिशा मे चली जाये।

पी. चिदम्बरम

तथ्यों से फर्जी मुठभेड, फर्जी विवाद

विचार–इशरतजहा और तीन अन्य गुजरात पुलिस द्वारा एक मुठभेड में मारे गए थे। यह मुठभेड प्रामाणिक थी या फर्जी? इसका जबाव मेरे पास नहीं है।

कुछ लोग है जो दावा करते है कि जबाव उन्हें मालूम है। मैं उन लोगों की निश्चयात्मकता पर हैरान हूँ जो कहते है कि वह वास्तविक मुठभेड थी। उनमें से किसी ने न तो केस डायरी देखी है न गवाही के बयाने देखे है न फोरेंसिक जांच रिपोर्ट पढी है। उनमें से किसी ने इस मामले के आरोपन का भी अध्ययन नहीं किया है। फिर भी वे पूरी निश्चयात्मकता से कहते है कि मारे गए चारों व्यक्ति आतंकवादी थे और मुठभेड प्रमाणित थी।

कसाव बनाम अखलाख वे शायद ही यह समझने की तनिक जहमत उठाए कि उनकी तर्क प्रकिया कानून के शासन को खत्म कर देगी।

मैं गर्व के साथ इस सिद्धांत को मानता हूँ कि कोई भी व्यक्ति तब तक निर्दोष है जब तक कि वह उचित व निष्पक्ष कानूनी प्रकिया से आंदोलन के द्वारा दोषी न ठहरा दिया गया हो। जिस दिन हम इस सिद्धांत को छोड देंगे यह दिन इस देश में कानून के शासन के अंत का आरंभ होगा।

सरकर ने अफजल कसाब के मामले में इस सिद्धांत का परित्याग नहीं किया। एक भीड ने मोहम्मद अखलाख के मामले में, इस सिद्धांत को परे झटक दिया। इशरतजहा मामला इस सिद्धांत के प्रति हमारी निष्ठा को परखने का एक अच्छा मामला है।

केन्द्रिय खुफिया एजेंसीयों ने गुजरात पुलिस को यह खुफिया जानकारी दी थी कि इशरतजहा और तीन अन्य आतंकवादी थे या आतंकवादियों से जुडे थे। इस सुचना के मुताबिक कारवाई करना संदिग्धों की गिरफ्तार करना साक्ष्य इक्कटठा करना उन्हें आरोपित करना और अदालत के समक्ष पेश करना गुजरात की डियूटी थी। पर जो हुआ यह एकदम उल्टा था।

15 जून 2014 को, इशरतजहा और तीन अन्य मार दिए गए। पुलिस ने दावा किया कि यह प्रामाणित मुठभेड थी। इशरतजहा को मॉ शमीमा कौसर का आरोप था कि यह फर्जी मुठभेड थी। और चारों व्यक्ति उस वक्त मारे गये जब वे पुलिस हिरासत में थे। एक विशेष न्यायाधीश ने मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट से जांच कराने का आदेश दिया।

जज,एस.आइ.टी और सी.बी.आई 7 सितंबर 2009 को जज तामांम, जांच के बाद इस नतीजे पर पहुँचे कि यह प्रामाणित मुठभेड में हुई थीं। उनके तथ्य सिहरन पैदा करने वाले थे।

कि चारों चारों व्यक्ति 14 जून 2004 की रात को मारे गए, जब वे पुलिस हिरासत में थे। कि काफी नजदीक से गोलिया चलाकर उन्हें मारा गया। जब वे कार में बैठे थे और कि जिन हथियारों से गोलिया चलाई गई थी गैर लाईसेंसी तथा अवैध थे।

गुजरात हाईकोर्ट ने 12 अगस्त 2010 के अपने आदेश में एक एस.आइ.टी. गठित करने का आदेश दिया। जांच के बाद एस.आइ.टी. इस नतीजे पर पहुॅची कि वह मुठभेड एक फर्जी मुठभेड थी।

हाईकोर्ट ने 1 दिसंबर 2011 को आदेश दिया कि मामला सी.बी.आई के सुपुर्द कर दिया जाए। सी.बी.आई ने जांच की और इस नतीजे पर पहॅूची कि यह मुठभेड एक फर्जी मुठभेड थी। सी.बी.आई ने 3 जून 2013 को सात पुलिस अफसरों के खिलाफ आरोप पत्र दायर किया। इस सिद्धांत के प्रति जिसे मैं अनुल्लंघनीय मानता हॅू अपनी निष्ठा कायम रखते हुए मैं यह कहने को तैयार हॅू कि उन पुलिस अफसरों को तब तक निर्दोष माना जाए जब तक वे अदालत से दोषी न ठहरा दिया जाए।

हलफनामें जमीना कौसर द्वारा किए गए इस मामले में केन्द्र सरकार की भूमिका हाई कोर्ट में एक हलफनामा दाखिल करने तक सीमित थी। एक हलफनामा पहला हलफनामा 6 अगस्त 2009 को दाखिल किया गया । एक महीने बाद जज तामांग की रिपोर्ट जारी हुई। गुजरात में और गुजरात के बाहर भी इस पर काफी हल्ला मचा। गुजरात पुलिस ने हलफनामे की गलत व्याख्या करते हुए और खुफिया जानकारी का हवाला देते हुए मुठभेड को सही ठहराने की कोशिश की। लिहाजा हलफनामें को स्पष्ट करना जरुरी था। इसी तकाजे से एक दुसरा हलफनामा 29 सितंबर 2009 को दाखिल किया गया। देश के महाधिवक्ता ने इस हलफनामें की बारीकी से जांच और पुष्टि की थी। इसके दो पैराग्राम, पैराग्राम नं 2 और पैराग्राम नं 5 बहुत अहम थे। इसमें महत्व का स्पष्टीकरण यह था कि खुफिया सुचना अपने में कोई निर्णायक सबूत नहीं है। और ऐसी सूचना राज्य सरकार तथा राज्य की पुलिस को कार्यवाई के मकसद से भेजी जाती है।

कोई भी सरकार किसी को दोषी या निर्दोष नहीं ठहरा सकती। कोई भी यह नहीं कह सकता कि इशरतजहा और तीन अन्य आतंकवादी थे। ठीक इसी तरह कोई भी यह नहीं कह सकता कि सी.बी.आई के द्वारा आरोपित किए गए सात पुलिस अफसर हत्या के दोषी थे। यह अधिकार सिर्फ अदालत की है।

आम मेहरबानी का उन दो पैराग्राम को पढे। कृपया मुझे बताए कि इन दो पैराग्राफ में या कि समुचे दुसरा हलफनामा में कौन सा शब्द पद या वाक्य नैतिक या कानूनी रुप से गलत था।

असल विवाद हलफनामा को लेकर नहीं 14–15 जून 2004 को रात को हुई मुठभेड को लेकर है। क्या यह फर्जी मुटभेड थी? मैं नही जानता । लेकिन क्या हलफनामों पर विवाद फर्जी हैं बेशक हों।

दूसरे हलफनामें का अंश 2 मैं वह दूसरा हलफनामा बाद की घटनाओं के मद्देनजर पेश कर रहा हॅू जो याचिका से जुडे मुद्दों से संबंधित है और इसका मकसद भारत सरकार द्वारा दिए गए हलफनामें पर उपजी आशंकाओं का निवारण करना और उस हलफनामें के कुछ अंशों की गलत व्याख्या की कोशिशों का प्रतिवाद करना हैं।

5 मैं विनम्रतापूर्वक यह स्वीकार करता हॅू कि केन्द्र सरकार ने उपयुक्त हलफनामें में मामले के गुण दोष या पुलिस कारवाई पर कुछ नहीं कहा था। यह आवश्यक रुप से उन आरोपी से निपटना था, जो केन्द्र सरकार के पास उपलब्ध खुफिया सुचनाओं से संबंधित है और जो सूचनाएॅ नियमित तौर पर राज्य सरकारों ये साझा की जाती हैं। केन्द्र सरकार का प्राथमिक सरोकार यह देखना है कि भारतीय सुरक्षा एजेंसियों द्वारा इक्टठा की गई सुचनाओं और उनके प्रयास प्रमाणित हो। पर मैं सभी को यह स्पष्ट कर देना चाहता हॅू कि ऐसी सुचनाएॅ अपने में निर्णायक सबूत नहीं है और इन पर क्या कारवाई करनी है यह राज्य सरकार तथा राज्य की पुलिस को तय करना है। केन्द्र सरकार ऐसी कारवाई के आड़े नहीं आती न ही वह किसी नाजायज या ज्यादती भरी कारवाई की अंदेखी या पुष्टि करती है।

समीक्षाः—आप भारत सरकार के पूर्व गृहमंत्री रहे हैं। आपकी गिनती देश के तेरह योग्यतम राजनेताओं में होती है। आपकी आर्थिक विश्वसनीयता का स्पष्ट ऑकलन कभी नहीं किया गया, किन्तु आपकी प्रशासनिक योग्यता अन्य सभी प्रधानमंत्री से अधिक मानी गई। एक बार ऐसा भी समय आया था जब आपको प्रधानमंत्री बनाने तक की मांग की गई थी। माना गया है कि आप में दृढ़ फैसले लेने की क्षमता है तथा कुटनीति के मामले में भी आप औरों से अधिक अच्छे सिद्ध हुए है। मुझे मालूम है कि आपने छ0ग0 से नक्सलवाद के सफाये के लिए कुछ लीक से हटकर भी योजना बनाई थी, जिसे दिग्विजय सिंह ने असफल कर दिया। आपकी प्रशंसा में ऐसा भी कहा गया है कि आपने योजना बनाकर किसी नक्सलवादी को गुप्त रूप से मरवाने तथा पकड़वाने में सफल कुटनीतिज्ञ की भूमिका अदा की थी। सम्भवतः उस घटना में आपने अपने उस सिद्धांत का अनुशरण नहीं किया था, जिस सिद्धांत की आप आज

वकालत कर रहे है। सम्भवतः आपने गृहमंत्री रहते हुए कुछ अति प्रतिष्ठित लोगों के गुप्त रिकार्ड भी करवाने का प्रयास किया जो पूरी तरह गैर कानूनी भी था तथा अनैतिक भी।

मेरे विचार से आपका यह कथन सत्य नहीं है कि जब तक कोई व्यक्ति न्यायालय से अपराध सिद्ध घोषित न हो जाये, तब तक वह निर्दोष है। यदि यह बात सच है तो किसी निर्दोष को आप मुकदमा चलते तक जेल में बंद कैसे रख सकते है? यह मान्यता कानूनी दृष्टि से यदि सच भी है तो ऐसी मान्यता को बदल देना चाहिए। वास्तविक सिद्धांत यह है कि यदि किसी व्यक्ति को पुलिस आरोपी मानकर न्यायालय में अंतिम निर्णय के लिए प्रस्तुत करती है तो वह व्यक्ति निर्णय होते तक न तो अपराधी है और न ही निरपराध। बल्कि वह उस कालखण्ड में संदिग्ध अपराधी है जिस पर अपराध करने के पुख्ता सबूत है किन्तु न्यायालय से निर्णय नहीं हुआ है। मेरा तो यहॉ तक मानना है कि किसी अपराधी को बिना न्यायालय में प्रस्तुत किये पुलिस द्वारा मार देना एक गैर कानूनी कार्य है, अपराध नहीं। यदि किसी व्यक्ति को फांसी होनी चाहिए और पुलिस ने बिना न्यायालय में प्रस्तुत किये उसकी हत्या कर दी तो इसमें व्यवस्थागत प्रकिया का उल्लंघन मात्र हुआ न कि कोई सामाजिक अपराध। यदि किसी पुलिस वाले ने ऐसा किया है तो कानून के अनुसार दण्ड प्राप्त करेगा। किन्तु ऐसा व्यक्ति समाज में सिर झुकाकर चलने के लिए बाध्य नहीं होगा, क्योंकि उसने कोई अपराध नहीं किया हैं।

पी. चिदम्बरम जी अच्छी तरह समझते है कि न्याय और कानून यदि एक है तो बहुत अच्छा है। किन्तु यदि दोनों अलग–अलग है तो समाज को न्याय का पक्ष लेना चाहिए, कानून का नहीं। ऐसी परिस्थिति में सरकार को अपने कानूनों पर फिर से विचार करना चाहिए और तब तक किसी सिद्धांत पर दृढ़ होकर विचार नहीं देना चाहिए। इशरतजहॉ अपराधी थी और उसकी हत्या होनी चाहिए थी। यह पी. चिदम्बरम जी भी जानते है। यदि न्यायालय में प्रस्तुत किये बिना इशरतजहॉ की फर्जी मुठभेड सिद्ध हो जाती है तो कानून ऐसी मुठभेड करने वालो को दण्डित करेगा किन्तु साथ ही सरकार और न्यायालय को मिलकर यह भी विचार करना चाहिये कि एक फांसी देने योग्य अपराधी को पुलिस ने बिना न्यायालय में प्रस्तुत किये फर्जी मुठभेड में किस मजबूरी में मारा और उस मजबूरी को भविष्य के लिए कैसे ठीक किया जाये।

मैं देख रहा हूॅ कि अनेक लोग छ0ग0 में नक्सलवादियों की फर्जी मुठभेड के नाम पर आंसू बहाने के लिए भिन्न–भिन्न बहुरुपियों की शक्ल में चले आते हैं। जब तक यह विश्वास न हो जाये कि किसी पुलिस वाले ने किसी निर्दोष को व्यक्तिगत कारणों से जानबूझकर अपराधी सिद्ध करके मारा है तब तक हमारी कोई सहानुभूति उस संदिग्ध अपराधी के साथ नहीं हो सकती। ऐसे संदिग्ध अपराधी की सहायता की अनुमति सिर्फ उन्हें ही दी जा सकती है जो उस परिवार के सदस्य हैं, उस संगठन के सदस्य हैं, अपराधी के वकील है, अथवा जो यह निश्चित रुप से जानते हैं कि वह व्यक्ति निर्दोष था। इनके अतिरिक्त यदि कोई किसी संदिग्ध अपराधी के मामले में पक्ष लेता है तो अवश्य ही यह संदेह होता है कि उसे कहीं न कहीं से या तो आर्थिक लाभ हुआ होगा अथवा यह भी हो सकता है कि वह अपराध में शामिल रहा हो और किसी कारण से बच गया हो। अन्य कोई ऐसे मामले में अपराधियों के पक्ष में खड़ा होकर सामाजिक कलंक से नहीं बच सकता।

पी. चिदम्बरम जी को यह बात भी मालूम है कि गुजरात में गोधरा मामले में मुसलमानों के कत्लेआम का आरोप नरेन्द्र मोदी तक पर लगा था। चाहे वह सच हो या झूठ। किन्तु भारत की जनता को यह विश्वास हो गया कि नरेन्द्र मोदी ने इस हत्याकाण्ड में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस विश्वास ने नरेन्द्र मोदी को प्रधानमंत्री बनने में भरपूर सहायता की। सिक्खो के कत्लेआम के बाद भी काग्रेस की प्रतिष्ठा का बढना, सोहराबुदीन हत्याकांड के बाद अमित साह की ताजपोशी, पंजाब मे प्रत्यक्ष फर्जी मुठभेडो के बाद भी मुठभेडो की प्रशंसा, छत्तीसगढ मे फर्जी भुठभेड मे नक्सलियो के सफाये के आरोपो के बाद भी सरकार की बढती प्रतिष्ठा कानून और न्याय के बीच जन भावना को स्पष्ट करती है। दूसरी ओर इशरतजहॉ जैसी आतंकवादी महिला की हत्या को आपने और आपकी सरकार ने फर्जी मुठभेड सिद्ध करने में कोई कसर नहीं छोडी। जिसका परिणाम आपके सामने है। मैं चाहता हूॅ कि आप तीन बातों पर गम्भीरता से विचार करें–1. पुलिस आरोपी ,निर्दोष नहीं होता बल्कि संदिग्ध अपराधी होता है। 2. न्याय और कानून यदि विपरीत मार्ग पर चले तो समाज न्याय के पक्ष में झुकता है तथा समाज चाहता है कि सरकार अपने कानूनों की फिर से व्याख्या करें। 3. वास्तविक अपराधियों का न्यायालय ये निर्दोष छूटना भी एक आपराधिक कार्य है। यदि यह प्रतिशत बढ जाये तो कानून हाथ में लेने की प्रवृत्ति बढती है। ऐसी स्थिति में पुलिस को कठोर दण्ड देने की अपेक्षा न्यायिक प्रकिया को अधिक व्यावहारिक बनाया जाना चाहिए।

इस पखवाडे के समाचार

1 सलमान खान की टिप्पणी और पेशेवर भावनाओं का भड़कना

समाचार है कि सलमान खान ने किसी प्रश्न के उत्तर में यह कह दिया कि किसी अखाडे में कुश्ती लडने की ऐक्टिंग करके निकलते समय उसकी शारीरिक स्थिति और चाल इस तरह दिखती है जैसे कोई बलात्कार पीडित महिला बलात्कार के बाद निकल रही हो। इस टिप्पणी पर सारे देश में उनकी निन्दा होने लगी। कुछ न्यायालयों में मुकदमा करने लगे। बहुतों की भावनाएँ आहत होने लगीं।

मैंने भी बहुत सोचा। मुझे तो इस कथन में आंशिक चूक के अतिरिक्त कोई ऐसी बात नहीं लगी जो चर्चा भी करने लायक हो। वैसे सलमान खान ने यह वाक्य कहते ही तुरंत कह दिया कि मैं अपना वाक्य वापस लेता हूँ किन्तु फिर भी कुछ लोग बात को तूल देने से पीछे नहीं हटे। मुझे ऐसा लगा कि बात का बतंगड बनाने के पीछे का मुख्य कारण सलमान खान का मुसलमान होने से जुडा दिखता है। तालिवानी प्रवृत्ति सिर्फ मुसलमानों की ही ठेकेदारी नहीं होती। हिन्दुओं में भी तालिबानी प्रवृत्ति के लोग होते हैं। इनके पास कभी कोई भावना तो होती ही नहीं है। ये तो सोच समझ कर किसी अवसर की तलाश में रहते हैं जिस तरह मक्खियां किसी खुले घाव की तलाश में रहती हैं। अवसर मिलते ही ऐसी प्रवृत्ति के लोग भावना प्रधान लोगों की भावनाएँ भडकाने के प्रयास में सक्रिय हो जाते हैं। मैं जानता हूँ कि ऐसे कुकृत्यों में इस्लाम को मानने वालों की संख्या बहुत अधिक होती है किन्तु इसका यह अर्थ नहीं निकाला जाना चाहिये कि भावना भडकने को शस्त्र मानकर उसे हर मुसलमान पर प्रयोग कर दिया जावे।

कुछ और भी लोग हैं जिनकी भावनाएँ बहुत जल्दी भडकती हैं। किसी पुरुष द्वारा किसी महिला के विषय में टिप्पणी करते ही कुछ पेशेवर महिलाओं की भावनाएँ भडकने लगती हैं। ऐसी महिलाओं के पास कोई पारिवारिक या रचनात्मक काम तो होता नहीं। भावनाओं का व्यवसाय करके ही तो उन्हें राजनीति में, मीडिया में या समाज में अपनी प्रतिष्ठा और सम्मान बनाये रखना पड़ता है। ऐसी महिलाओं की कुल संख्या दो प्रतिशत से भी कम होती है किन्तु ये ऐसे ही घावों को खोज कर तो इतनी मोटी हो जाती हैं कि आम लोग इनसे भय खाने लगते हैं। ऐसी परजीवी महिलाओं की भी संख्या और महत्व में विस्तार चिन्ता का विषय हैं।

ऐसी वाचाल महिलाओं के इर्द गिर्द सम्पर्क में रहने वाले कुछ पुरुष भी ऐसे ही अवसर की तलाश में रहते है कि कोई सलमान खान कोई मुलायम, कोई विजयवर्गीय महिलाओं के विषय में टिप्पणी कर दे तो बस उनकी भावनाओं को चोट लगने का बहाना मिल जावें। ऐसे लोग विशेष रुप से इसलिये अपना न्यूशेंस वैल्यू बढाकर रखना चाहते हैं कि कोई अन्य उनके व्यक्तिगत मामले की चर्चा करने की हिम्मत न करे। जो काम वे स्वयं आये दिन करते रहते हैं वैसी ही किसी ने कोई बात कह भी दी तो इनकी भावनाएँ भडक जाती है।

मेरा आप सबसे अनुरोध है कि आप यदि एक बार अपनी भावनाओं को भडकने से रोकने की आदत डाल लें तो ये तालिवानी सोच वाले हिन्दू–मुसलमान, पेशेवर महिलाएँ तथा कुछ अन्य परजीवी लोगों की दुकानदारी ही चौपट हो जायेगी। टी.बी वाले भी बेचारे कुछ नये काम में लग जायेंगे। बलात्कारी पुरुष और तालिवानी मुसलमान के विरोध के नाम पर तालिवानी हिन्दू और पेशेवर महिलाओं का प्रोत्साहन एक खतरनाक समस्या है। हमें सलमान खान के मामले से सबक सीखना चाहिये।

प्रश्नोत्तर

1 श्री लटूरी सिंह, रामघाट रोड अलीगढ उ0प्र0 ज्ञानतत्व

प्रश्नः— ज्ञानतत्व दिनांक 26 से 31 जनवरी 2016 में प्रकाशित स्वतंत्रता अनुशासन और शासन शीर्षक के अन्तर्गत आपके द्वारा की गई विस्तृत व्याख्या महर्षि दयानंद सरस्वती द्वारा आर्य समाज स्थापित करते समय आर्य समाज का दसवां नियम सब मनुष्यों को सामाजिक सर्व हितकारी नियम पालने में परतंत्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतंत्र रहें, के आधार पर की गई है, जो प्रशंसा करने योग्य है।

परिवार व्यवस्था कितनी पारम्परिक कितनी आधुनिक पर लिखे विचार गुण व दोष के आधार पर बहुत सही व सटीक हैं। मैं भी उक्त विचारों से संतुष्ट हूँ। सम्पादक ने अपने अनुभवों का ध्यान रखते हुए परिपक्व ज्ञान के आधार पर निपुणता के साथ विश्लेषण किया है। आज कल देश में अधिकतर परिवारों में सम्पादक द्वारा लिखे विचारों के अनुरुप ही हो रहा है। अधिकतर लोग स्वार्थवश होकर नैतिकता भूलते जा रहे हैं।

आदर्श परिवार व्यवस्था की रुपरेखा पर लिखे विचार शत प्रतिशत सही हैं, मैं व्यक्त किये गए विचारों से पूरी तरह से सहमत हूँ। इनके अन्तर्गत पृष्ठ 16 पर स्पष्ट किया है कि इन सब समस्याओं के जन्मदाता अम्बेडकर की

वर्तमान नायक की छवि भी खलनायक में बदल जायेगी। आज तो यहॉ तक दिख रहा है कि सत्ता प्राप्त होते ही नरेन्द्र मोदी, संघ परिवार जैसे लोगों की भी भीमराव अम्बेडकर को नायक सिद्ध करना मजबूरी बन गई है। लेकिन व्यवस्था परिवर्तन अभियान कमेटी एक आदर्श परिवार व्यवस्था को संवैधानिक मान्यता दिलाने के लिए 2017 से एक जनमत जागरण अभियान शुरु कर रही है। जो एक अच्छा संकेत है।

सोनिया राहुल को न्यायालय का नोटिस और हंगामा भारतीय संसद और भारत पाक संबंध खान बन्धुओं द्वारा निर्मित फिल्मों का विरोध अरविंद केजरीवाल की राजनैतिक समीक्षा लीक छोड तीन ही चले पर सम्पादक द्वारा व्यक्त किये विचार जनता की सोच के अनुरुप है।

2 दिवाकर बाजपेयी, रायबरेली, उ0प्र0 ज्ञानतत्व

प्रश्नः—मई 15 के दूसरे अंक में प्रकाशित लेख डॉ भीमराव अम्बेडकर किस वर्ग के नायक और किसके खलनायक थे के संबंध में मैं आपके विचारों से पूर्णतया सहमत हूॅ। डा अम्बेडकर ने भारतीय संविधान को गुलामी से जकडने का काम किया है। गुलामी की जंजीरों को तोडने की हिम्मत कोई भी पार्टी नही करती दिखाई दे रही है। देश की आजादी को 70 वर्ष होने जा रहे है दलित वर्ग आज भी उसी स्थिति में है। आरक्षण का लाभ मुटठी भर बुद्धिजीवी दलितो को ही मिला है। वे बडे—बडे पदों में पहुॅच गये है और लाखो रुपये प्रतिमाह वेतन ले रहे है। मेरे विचार से अब इनके आर्थिक रुप से बेहद कमजोर परिवारों को आरक्षण का लाभ मिलना चाहिए। इसके साथ ही संवेदनशील पदो पर आरक्षण पूरी तरह बंद होना चाहिए। यह विडम्बना है कि 90 प्रतिशत अंक पाने वाला सवर्ण डाक्टर नहीं बन पा रहा है जबकि 40 प्रतिशत अंक प्राप्त करने वाला दलित डाक्टर बन रहा है। अब आप बताये कि क्या डॉ. अम्बेडकर ने न्याय संगत कार्य किया है।

3 आर्य सूर्यपाल प्रजापति, प्रजापति धर्मशाला, नेहरु पैलेस, नई दिल्ली

प्रश्नः—ऐ वीर भारत के धरा के सपूत जाग जरा तुझे दुत्कार कहां से आती है। भारत महान की आन बान पर मर मिटने को आज मां तुझे बुलाती है। आज समाज में एवं मातृ भूमि भारत महान में चुनौतिया भी बहुत है लेकिन चुनौतिया तो वीर पुरुषों के लिए अपनी क्षमता को प्रदर्शित करने का अवसर प्रदान करती है। भारत महान को यदि विश्व की महाशक्ति के रुप में ही देखना है तो ऐसी सोच रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति को इस महा अभियान के महारथ को खींचने का कार्य करना होगा। आज भारत महान में मैकाले की विदेशी शिक्षा प्रणाली को आमूल चूल बदलकर स्वदेशी शिक्षा प्रणाली को ग्रहण करना होगा। भ्रष्टाचारी, घोटाले बाज, अंग्रेजो के पिछलग्गू कांग्रेसियों ने इग्लिश भाषा की गुलामी की जंजीरो में जकडा रखा भारत को। इससे छुटकारा पाना सब का कर्तव्य बन जाये। आर्य सुर्यपाल प्रजापति नवयुवको को आहवान कर रहे है कि उठो जागों और आगे बढो। कमर कस लो। तब तक संघर्ष करो जब तक लक्ष्य न प्राप्त हो जाए। लक्ष्य पर पहुचना ही हम सबका कर्तव्य ही है। इन विकट और विदुप परिस्थितियां में भारत महान को पुनः उबारने के लिए, इन्कलाब अभियान की अत्यन्त आवश्यकता है। इसके लिए अग्रदूत बनो। आगे बढो। जीत ही उन्हें मिली जो हार से जमकर लडे है जो हार के भय से डिगे वो धराशाही हुए है। आगे बढ़ो कदम आगे बढा के ना पीछे हटेंगे सामने मृत्यु होते भय नही मानेगे।

1. पाकिस्तान जो आज अमृतसर तक बना है। यदि आर्यसमाज न होता तो वह नई दिल्ली की जड तक पहुच गया होगा। उप प्रधानमंत्री एवं गृहमंत्री भारत सरकार बल्लभभाई पटेल
2. मैं महाऋषि दयानंद सरस्वती का आभार मानती हूॅ जिनके कारण मुझे विधवा को इतना सम्मान मिला और में भारत देश की प्रधानमंत्री बनी। श्रीमती इन्द्रा गॉधी।
3. आर्य समाज की भागीदरी के बिना भारत देश आजाद नहीं कराया जा सकता था। महामहिम राष्ट्रपति डा राजेन्द्र प्रसाद जी।
4. स्वराज्य मंदिर में पहली मूर्ति स्वामी दयानंद सरस्वती की स्थापित की जायेगी । नेताजी सुभाषचन्द्र बोस।
5. भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति में 85 प्रतिशत योगदान आर्य समाज का है। डॉ0 पटाभिसीतारमैया जिन्होंने कांग्रेस पार्टी का इतिहास 2 भागों में लिखा। मूल्य दोनों भागों का रु 3500रु आजादी के लिए विभिन्न महान नेताओं के विचार श्री लाजपतराय अग्रवाल प्रतिष्ठाता अमर स्वामी प्रकाशन विभाग 1050 विवेकानन्द नगर गाजियाबाद उ0प्र0।

उत्तरः—आरक्षण तथा अम्बेडकर जी के संबंध में कई अंको में विस्तृत विचारों का आदान प्रदान तथा समीक्षा हो चुकी है। अतः पुनरावृत्ति की आवश्यकता नहीं है। स्वामी दयानन्द ने सम्पूर्ण मानवता की चिंता की थी, विश्व व्यवस्था पर सोचा था, और यही कारण था कि स्वामी जी ने अपने संगठन के साथ समाज शब्द जोडा, धर्म नहीं।

राष्ट्र भी नहीं। यह अलग बात है कि इस सामाजिक परिवर्तन की शुरुवात भारत में हुई। अब यदि हम इस सामाजिक परिवर्तन को धर्म या राष्ट्र तक सीमित करने का प्रयत्न करें तो यह हमारी भूल होगी। स्वतंत्रता संघर्ष में आर्य समाज आपातकालीन आवश्यकता समझकर कूदा था और स्वतंत्रता मिलते ही उस संघर्ष से दूर हो गया। मैं नहीं समझता कि अब भी आर्य समाज के कुछ लोग इस दिशा में आर्य समाज के नाम से क्यों प्रयत्नशील है? मैं स्वयं जीवन भर आर्य समाज के साथ जुड़ा रहा और अब मैंने वानप्रस्थ भी ले लिया। किन्तु मैंने आज तक कभी धर्म या राष्ट्र को अपनी अंतिम सीमाएं नहीं समझा क्योंकि स्वामी दयानन्द ने यह निर्देष दिया है कि सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने के लिए सदा तैयार रहना चाहिए। यहॉ तक कि मैने स्वयं को आर्य समाज के विचारो तक सीमित रखा और संगठन के साथ कभी नहीं जुडा रहा। क्योंकि संगठन के साथ जुडना अनुशासन के लिए बाध्य करता है और मैं एक वानप्रस्थी होने के नाते सत्य के अतिरिक्त किसी अनुशासन से बंधा नहीं रह सकता। आपने जो पत्र लिखा वह जोश वर्धक है और स्वतंत्रता के पूर्व ऐसे जोशवर्धक विचारो की बहुत आवश्यकता थी, किन्तु अब जोश की नही होश की जरूरत है। अर्थात गंभीर विचार मंथन होना चाहिये। मेरा आपसे निवेदन है कि आप धर्म और राष्ट्र के साथ–साथ समाज के विषय में भी कुछ सोचने की आदत डालें। समाज का अर्थ परिवार से लेकर विश्व व्यवस्था तक से जुडा हुआ है।

4 डॉ डी.पी. जानी बडौदा, गुजरात,

प्रश्नः– आपका ज्ञानतत्व मिलता है। मैं एक लेखक और पत्रकार हूॅ। मेरी आर्थिक स्थिति इतनी सुदृढ नहीं है कि मैं आपको ज्ञानतत्व का पूरा शुल्क भेज सकूॅ। किन्तु मैं आपको आधा शुल्क भेजना चाहता हूॅ। मेरा निवेदन है कि आप मुझे आधा शुल्क भेजने की अनुमति दें तथा उसे पूरा शुल्क मान लें।

उत्तरः– मुझे यह अच्छी तरह जानकारी है कि विचारक साहित्यकार कवि पत्रकार लेखक जैसे कार्यो में सलंग्न व्यक्तियों की आर्थिक स्थिति बहुत खराब ही होती है। मेरा व्यक्तिगत अनुभव भी यही है। इसलिए मैं ऐसे लोगों की मजबूरी समझता हूॅ। मैं स्पष्ट कर दूॅ कि ज्ञानतत्व सिर्फ वैचारिक पत्रिका है, व्यवस्था परिवर्तन में वैचारिक सहयोग तक सीमित है तथा उसमें भी विचार प्रसार से पूरी तरह दूर रहकर विचार मंथन तक सीमित है। ज्ञानतत्व पाक्षिक का कोई शुल्क नहीं है इसलिए आपको आधे या पूरे शुल्क की चिंता नहीं करनी चाहिए। आप ज्ञानतत्व पढते है अपने विचार भेजते है, यही ज्ञानतत्व का शुल्क है। जहॉ तक अर्थव्यवस्था का प्रश्न है तो ज्ञानतत्व निः शुल्क भी नहीं है। बल्कि ज्ञानतत्व के पाठक अपनी आर्थिक क्षमता तथा इसकी सामाजिक उपयोगिता को देखते हुए जो भी धन भेजते है उस धन से ही सारी व्यवस्था हो जाती है। कुछ लोग दस रु भी भेज देते है तो कुछ ऐसे भी लोग है जो पाच दस हजार रु भी भेज देते है। इसलिए इस संबंध में आपको कोई चिंता नहीं करनी चाहिए।

5 रविन्द्र सिंह तोमर गुना म0प्र0

प्रश्न–संदिप पांडे ने एक लेख के माध्यम से अपनी पीडा व्यक्त की है, जो मैं आपको अक्षरशः भेज रहा हूॅ। आपकी प्रतिकिया चाहिए।

काशी विश्वविद्यालय के भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान में ढाई साल पढाने के पश्चात मेरा अनुबंध समय से पूर्व ही समाप्त कर दिया गया है। इक्कीस दिसंबर 2016 को भारतीय प्राद्योगिक संस्थान के बोर्ड ऑफ गवर्नर की बैठक से मेरा अनुबंध समाप्त करने का निर्णय कुलपति गिरीश चन्द्र त्रिपाठी ने लिया। यह फैसला भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान के फैकल्टी मामलों के डीन प्रो. धनंजय त्रिपाठी के दबाव में लिया गया। प्रोफेसर त्रिपाठी इलाहाबाद विश्वविधालय से पहले तनख्वाह तो लेते थे, लेकिन न वहॉ पढाते थे और न हीं उन्होने वहा कोई शोधपत्र प्रकाशित किया था, फिर भी वे एक केन्द्रिय विश्वविद्यालय के कुलपति बनाये गये यह आश्चर्य का विषय है। मेरे खिलाफ आरोप था कि मैंने सरकार प्रतिबंधित निर्भया कांड से जुडी एक फिल्म अपनी कक्षा में दिखाने का निर्णय लिया। साथ ही यह भी कि मैं नक्सलवादी हूॅ और राष्ट्रविरोधी गतिविधियों में संलिप्त हूॅ। छः जनवरी 2016 के एक आदेश में निदेशक भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान ने कोई कारण बताये बिना कहा कि पत्र से एक माह की अवधि में मेरा अनुबंध समाप्त हो जायेगा।

मैं यह स्पष्ट करना चाहता हूॅ कि मैं कोई नक्सलवादी नहीं हूॅ। मैं अपने आप को गॉधीवादी विचारधारा के सबसे नजदीक पाता हूॅ, नक्सलवादी जो मुद्दे उठाते है उनका मैं समर्थन करता हूॅ, लेकिन मैं उनके हिंसात्मक तरीको से सहमत नहीं हूॅ। मैं यह भी मानता हूॅ कि नक्सली होने के लिए बहुत साहस और त्याग की जरुरत पडती

है जो मुझमें नहीं है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की ब्राहमणवादी विचाराधारा, जिसके साथ जाति प्रथा जुडी ही हुई है, कभी भी समतामूलक न्यायपूर्ण समाज के संघर्ष को समझ नहीं सकती।

निर्भया पर बी.बी.सी ने जो डाक्युमैंट्री बनायी थी उसे भारत सरकार ने प्रतिबंधित किया था, उसे मैं अपनी कक्षा में दिखाने वाला था। लेकिन कक्षा से पहले मुख्य प्रॉक्टर और थानाध्यक्ष के आ जाने से और उनके मना करने पर मैंने उस फिल्म का प्रदर्शन नहीं किया। मुख्य प्रॉक्टर तो मुझसे कक्षा ही रद्द करा रहे थे लेकिन चूंकि चर्चा पर भारत सरकार ने कोई रोक नहीं लगायी थी अतः मैंने महिला हिंसा के मुद्दे पर एक अन्य फिल्म दिखा कर चर्चा करवायी।

अभी कुछ महीनों पहले न्यूयार्क के कोलंबिया विश्वविद्यालय की एक छात्रा ने जिसके साथ उसी के एक सहपाठी ने बलात्कार किया था अपने एक प्रोफेंसर की राय पर परिसर में एक गद्दा लेकर घूमना शुरु किया। यहां तक कि छात्रा गद्दे को विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह में भी लेकर चली गई। उसी दीक्षांत समारोह में दोषी छात्र को भी डिग्री मिली जिसने विश्वविधालय के खिलाफ मानहानि का मुकदमा दायर किया है। एक तरफ कोलंबिया विश्वविद्यालय प्रशासन है जो एक कीमत चुका कर भी पीड़िता के साथ खड़ा रहा और दूसरी तरफ काशी विश्वविद्यालय है जो महिला हिंसा पर चर्चा भी नहीं होने देना चाहता और किसी पुरुष प्रॉफेसर के किसी छात्रा और महिलाकर्मी के साथ यौन शोषण की घटनाओं में अपने पुरुष प्रोफेसर को ही बचाने की कोशिश करता हैं।

मैं राष्ट्र की अवधारणा या राष्ट्र की सीमाओं को नहीं मानता। मनुष्य को धर्म और जाति कृत्रिम श्रेणियों में बांटती है। अतः मैं राष्ट्र के विरोध में या राष्ट्र के पक्ष में तो हो ही नहीं सकता। मैं राष्ट्रवादी नहीं। अतंरराष्ट्रवादी या उससे भी बेहतर ब्रम्हांड वादी हूँ, जिसमें प्रकृति भी शामिल है। वैसे भी ऐसे लोगों के राष्ट्रद्रोही होने के आरोप लगाने मे उस विचारधारा के लोग है, जिसने अपने आप को भारत के स्वतंत्रता आंदोलन से अलग रखा, जो महात्मा गॉधी की हत्या के लिए जिम्मेदार है, जिसने बाबरी मस्जिद ध्वंस कर भारत में आतंकवाद नामक समस्या को न्यौता दिया, जो देश में कम से कम पांच बम विस्फोंट की घटनाओं, दो मालेगॉव में हैदराबाद अजमेर और समझौता एक्सप्रेस को अंजाम देने के लिए जिम्मेदार हैं। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की विचारधारा में हिंसा के बीच हैं, जो भारत को दीर्घकालिक समस्याग्रस्त राष्ट्र में तब्दील कर देगी। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की सोच भारत के सामाजिक ताने बाने को क्षतिग्रस्त कर देगी। हमारे स्वतंत्रता सेनानियों के देखे गये सपनों और संविधान में दिये गये मूल्यों के आधार पर प्रत्येक परिवार को बिना भेदभाव के सम्मानजनक ढंग से जीने और आजीविका के अधिकार प्राप्त है लेकिन आर.एस.एस आधुनिक भारत के निर्माण में बाधा बना हुआ है।

मुझे इस बात का कोई अफसोस नहीं कि मेरा अनुबंध समाप्त कर दिया गया है। क्योंकि यह फैसला मेरी अकादमिक योग्यता में किसी कमी के आधार पर नहीं बल्कि मेरी राजनीतिक विचारधारा मे निष्ठा और सामाजिक कामों को लेकर लिया गया है। मेरे छात्रों कर्मचारियों प्रोफेसरों और परिसर के आसपास रहने वाले समुदायों के साथ बिताये गये क्षण यादगार रहेंगे। मैं भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान के निदेशक प्रोफेसर राजीव संगल के प्रति कृतज्ञ हूँ जिन्होंने मुझे इस बात की छूट दी कि मैं परीक्षा न लेकर एक प्रतिस्पर्धा रहित माहौल में हरेक छात्र से व्यक्तिगत साक्षात्कार के आधार पर उसका मूल्यांकन कर सकू, जिसमें छात्र को अपनी समझ विकसित करने के मौके मिलते रहे।

उत्तरः—मैं आपसे निकटता तक परिचित हूँ। आपने अपने को गॉधीवादी लिखा तथा यह भी लिखा कि आप नक्सलवादियों के विचारों से सहमत है किन्तु हिंसात्मक तरीको से सहमत नहीं है। इसी लेख में तत्काल बाद आपने लिखा कि नक्सली होने के लिए बहुत साहस और त्याग की जरुरत पड़ती है, जो आप में नहीं है। मेरे विचार से आपके दोनों कथनों में विरोधाभाष है। जो लोग हिंसा में लिप्त होते है या उसका समर्थन करते है उन्हें गॉधी जी कायर मानते थे, साहसिक नही। मैं गांधी विचारों से जुडा हूँ तथा हिंसा के समर्थकों को कायर मानता हूँ। मैं तो यहॉ तक मानता हूँ कि जो लोग सामाजिक व्यवस्था के बदलाव के लिए सरकारों का मुह देखते है वे भी निकम्मे है। गॉधी जी ने अपने आचरण और विचार के बल पर सामाजिक परिवर्तनों का प्रयास किया था। आपने राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ को ब्राहमण वादी विचारधारा, जाति प्रथा के साथ जोडा तो मेरे विचार में या तो आपका अज्ञान है या संघ के विरुद्ध कोई दुराग्रह। ब्राहमणवादी विचारधारा कभी हिंसा का समर्थन नहीं कर सकती जबकि संघ, इस्लाम, तथा साम्यवाद हिंसक विचारों के समर्थक हैं। ब्राहमणवादी विचारधारा किसी संगठन से कभी नहीं बनती जबकि संघ परिवार एक संगठन है। लगता है कि आपने जन्म से घोषित ब्राहमणों को ही ब्राहमणवादी विचारधारा के साथ जोड दिया जबकि वास्तव में ब्राहमणवादी विचारधारा कर्म से स्थापित होती है, जन्म से नहीं। आप पांडे है

इसलिए मैं आपको ब्राहमण मान लूँ यह आवश्यक नहीं। मेरे माता पिता अग्रवाल है किन्तु मैं बाल्यकाल में ही आर्य समाज के द्वारा ब्राहमण घोषित कर दिया गया तो मैं अपने को ब्राहमण मानता हूँ। और इसलिए मुझे आपके कथन पर आपत्ति है। आपने काशी हिन्दू विश्वविधालय को कोलंबिया विश्वविद्यालय से सीख लेने की सलाह दी। इससे भी मुझे कष्ट हुआ। यह हमारी गुलाम मानसिकता का प्रतीक है। हो सकता है आपको मैग्सेसे पुरस्कार मिलने से कुछ विदेशों के प्रति अधिक नरम और प्रशंसा का भाव आया हो किन्तु यह उचित नहीं।

आपने लिखा कि आपका नक्सलवादियों से कोई संबंध नहीं है। मैं नहीं कह सकता कि इसमें कितनी सच्चाई है। एक बार मैं स्वयं लड़के के साथ गढवा रोड रेल स्टेशन पर टिकट कटाने के लिए खड़ा था और दबंग लोग धक्का देकर पहले टिकट ले आ रहे थे। ऐसा लगा कि हमारी गाडी छूट जायेगी और हम टिकट नहीं ले पायेंगे। मेरे लडके ने मेरी अनुमति से वही मार्ग अपनाया और धक्का देकर टिकट ले आया। मैंने लडके से कहा कि धक्का देने में एक बुढिया गिर गई और उसे उठाना चाहिए था तो लडके ने कहा कि लोकतंत्र में तो कमजोर धक्का खाता है और मजबूत धक्का देकर टिकट ले आता है। धक्का देने वाला यदि गिरने वाले को उठाता रहेगा तो टिकट नहीं ले पायेगा। मैं बहुत दिनों तक सोचता रहा कि धक्का खाकर खडे रहना उचित था या धक्का देकर टिकट ले आना। मैं लम्बे समय तक इस उधेडबुन का निष्कर्ष नही निकाल सका तो मेरे एक नक्सलवादी मित्र ने सुझाया कि धक्का देकर टिकट लाना भी गलत है और धक्का खाकर चुपचाप खडे रहना भी गलत है । उचित मार्ग तो यह है कि धक्का देने वाले पर बल प्रयोग किया जाये, ऐसा बल प्रयोग कि उसके धक्का देने की आदत ही छूट जाये। यदि जरुरत पडे तो भले ही गोली मारनी पडे। बाद में मैंने देखा कि मेरा वह मित्र नक्सलवाद से जुडा हुआ था। मेरे और उसके बीच उतना ही अंतर था जितना आपने अपने और नक्सलवादियों के बीच लिखा। मैंने एक लेख लिखकर नक्सलवादियों को व्यवस्था परिवर्तन का वैसा ही सम्वाहक लिखा जैसा अंतर गॉधी और सुभाष का था। यहा तक कि म0प्र0 सरकार ने मुझे नक्सलवादी घोषित करके मेरे ऊपर मुकदमा भी चलाया जो मैं जीत गया।

जब हमारे जिले में नक्सलवाद आया और मेरा उनके प्रमुखों से कुछ संवाद हुआ तो मैंने यह बात जोर देकर पूछी कि नई व्यवस्था में संवैधानिक स्वरुप क्या होगा? उन्होंने कभी इस बात का उत्तर नहीं दिया कि नई व्यवस्था में संवैधानिक स्वरुप क्या होगा। मेरा उनसे मोह भंग हुआ। मैंने यह भी देखा कि नक्सलवाद किसी भी रुप में व्यवस्था परिवर्तन न होकर सत्ता संघर्ष है। उसके बाद मैं नक्सलवाद का प्रखर विरोधी बन गया।

मैं नहीं समझता कि आप किस सीमा तक नक्सलवाद के समर्थक है क्योंकि मैंने अपने मित्र से पूछा था कि नक्सलवादियों के व्यवस्था परिवर्तन में नया संवैधानिक स्वरुप क्या है तो उन्होंने कुछ नहीं बताया था। मैं समझता हूँ कि यदि किसी के पास वर्तमान संविधान को समाप्त करने की इच्छा है, प्रयत्न है और विकल्प के बारे में कोई सोच नहीं है तो उसकी नीयत में खोट है, मार्ग में नहीं । जबकि आप नक्सलवादियों के मार्ग के आलोचक है, नीयत के प्रशंसक। आपने माले गॉव हैदराबाद अजमेर विस्फोट की चर्चा की, किन्तु बम्बई ब्लास्ट संसद पर हमला जैसे अनगिनत आतंकवादी हमलों की कोई चर्चा नहीं की, जिसमें आतंकवादी मुसलमानों का हाथ रहा है। ऐसा लगता है कि आप किसी एक विचारधारा के विरुद्ध किसी दूसरी विचारधारा का पक्षपात कर रहे है, जो कोई अच्छी बात नहीं है।

आप किसी व्यवस्था से वेतन प्राप्त करते है इसका अर्थ है कि आपको उक्त व्यवस्था का अनुशासन भी मानना चाहिये। कुछ वर्ष पूर्व तक साम्यवाद नक्सलवाद कट्टरवादी इस्लाम समर्थित सरकार व्यवस्था प्रमुख थी तो उस तरह का व्यवहार करना आपकी आदत बन गई । अब या तो आदत बदलनी होगी या वेतन का मोह छोडना होगा। दोनो बाते एक साथ नही चल सकती । प्रोफेसर राजीव संगल ने आपको परीक्षा से छूट देकर बिलकुल गलत कार्य किया है। परीक्षा एक व्यवस्था का अंग है, व्यक्तिगत निर्णय का नही । यदि आप जैसे ईमानदार व्यक्ति की जगह कोई भ्रष्ट व्यक्ति रहा तो ऐसे मुल्यांकन का क्या परिणाम होगा यह उन्हे भी समझना चाहिये था तथा आपको भी। मुझे जानकारी है कि आपका अनुबंध गलत तरीके से समाप्त हुआ था, तथा आपको न्याय मिला है। यह बहुत अच्छी बात है किन्तु मेरी आपको सलाह है कि आप जन्म से जिस तरह ब्राहमण है गॉधीवादी है अहिंसक है उसी तरह कर्म से भी और विचारो से भी ब्राहमण गॉधीवादी और अहिंसक बने रहे। यही वास्तव में अंतरराष्ट्रवादी और बेहतर ब्रहमांडवादी होने की पहचान हो सकती है।